कैसा है दक्षिणी गोलार्द्ध का आसमान?

गुणाकर मुले

प्रस्तुतिः मिलिन्द साव

'एक थाल मोतियों से जड़ा, हम सब के सिर पर धरा।' हमारी सोच में उत्तरी गोलार्द्ध और उसका आसमान इस कदर हावी रहता है कि हम उत्तरी गोलार्द्ध को ऊपरी हिस्सा और दक्षिणी गोलार्द्ध को निचला हिस्सा मानने लगते हैं। कई लोग यह मानते हैं कि पूरा आसमान तो हमारे सिर के ऊपर है इसलिए दक्षिणी गोलार्द्ध के लोग उत्तर की ओर ताक-झाँककर थोड़ा-सा आसमान देख पाते होंगे।

छत्तीसगढ़, बी.टी.आई. के व्याख्याता मिलिंद साव ने प्रशिक्षणार्थियों से इस बारे में कुछ चर्चा छेड़ी। शुरुआत हुई एक सवाल से कि "पृथ्वी के ऊपर तो आकाश है, पर पृथ्वी के नीचे क्या है?" पहले तो, सभी विद्यार्थी इस प्रश्न से स्तब्ध रह गए! इस चर्चा को सार्थक रूप से आगे बढ़ाने में श्री गुणाकर मुले द्वारा लिखी गई किताब - आकाश दर्शन - के दो अध्याय बेहद उपयोगी साबित हुए। इसमें श्री मुले ने दक्षिणी गोलार्द्ध से आसमान में दिखाई देने वाले तारों, तारामण्डल आदि के बारे में विस्तार से लिखा है। उन्हीं में से कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

वस्तुतः, अन्तरिक्ष में ऊपर और नीचे शब्द कोई मायने नहीं रखते। पृथ्वी से देखने पर चन्द्रमा ऊपर दिखाई देता है और चन्द्रमा से देखने पर पृथ्वी ऊपर, उसके आकाश में दिखाई देगी। अन्य ग्रहों की तरह पृथ्वी भी अन्तरिक्ष में लटकी हुई सूर्य की परिक्रमा कर रही है। पृथ्वी के ऊपर यदि आकाश है, तो पृथ्वी के नीचे भी वही आकाश है। उत्तरी गोलार्द्ध के आकाश को यदि हम तथाकथित ऊपर मानें तो दक्षिणी गोलार्द्ध का आकाश नीचे कहलाएगा। उत्तरी गोलार्द्ध के आकाश और उसके तारों से हम परिचित हैं। पर, दक्षिणी गोलार्द्ध का आकाश हमारे लिए बहुत कुछ

अपरिचित होगा।

यदि हम भारत से जलयान पर सवार हो कर हिन्द महासागर में, पृथ्वी के अन्तिम छोर पर स्थित अन्टार्कटिका महाद्वीप जिसे धरती का सबसे निचला भाग कहा जा सकता है, की यात्रा करें, तो हमें आकाश में दिलचस्प नज़ारे देखने को मिलेंगे। ज्यों-ज्यों हम अन्टार्कटिका की ओर दक्षिण दिशा में आगे बढ़ते जाएँगे, आकाश में नए तारे दिखाई देने लगेंगे। मृग, कन्या, सिंह, वृश्चिक आदि तारामण्डल हमें उलटे नज़र आएँगे और क्रमशः दाएँ से बाएँ जाते दिखाई देंगे। उत्तरी खगोल का कोई भी परिचित तारामण्डल, जैसे - सप्तर्षि, शर्मिष्ठा (cassiopeia) आदि तथा ध्रुव तारा हमें दिखाई नहीं देंगे।

दक्षिण की ओर रुख

संसार की सभी प्राचीन सभ्यताओं का विकास उत्तरी गोलार्द्ध में हुआ है। अतः प्राचीन खगोलविदों को दक्षिणी आकाश के तारों की जानकारी नहीं थी। 15वीं सदी के उत्तरार्द्ध में यूरोप के साहसी नाविक दक्षिणी गोलार्द्ध के महासागरों में पहुँचने लगे। तभी से खगोलविदों का आगमन उन स्थलों में हुआ और दक्षिणी आकाश का परिचय सारी दुनिया को मिलने लगा।

खगोलविद योहान बायेर ने 1603 ई. में प्रकाशित अपने एटलस में पहली बार दक्षिण खगोल के कुछ तारामण्डलों की जानकारी दी।

महान वैज्ञानिक, गणितज्ञ और खगोलविद सर आइज़ेक न्यूटन के मित्र एडमण्ड हेली (1656-1742) स्वयं भी एक प्रतिभावान खगोलविद थे। उन्होंने एक धूमकेतु की खोज की थी, जिसे उनके नाम पर 'हेली का धूमकेतु' कहा जाता है और यह सिद्ध किया था कि धूमकेतु भी सौरमण्डल के घुमन्तू पिण्ड हैं। हेली ने बीच में ही ऑक्सफोर्ड में अपनी पढ़ाई छोड़ दी और आकाश की खोज के जुनून में अपने धनी पिता से अनुमति लेकर दक्षिणी खगोल के तारों का अध्ययन करने के लिए अफ्रीका के पश्चिम में स्थित एक द्वीप सेंट हेलना पहुँच गए। उस सूने द्वीप में 18 महीनों तक रह कर हेली ने दक्षिणी आकाश के तारों का सूक्ष्म अध्ययन किया और 341 तारों की स्थिति सारणी बना वापस लौटे। 17वीं सदी के अन्त में जर्मन खगोलविद हेवेलियूस ने अपनी तारा सारणी में 11 नए तारामण्डल जोड़े।

आज समूचे खगोल को 88 तारामण्डलों में विभक्त कर दिया गया है और उसकी सीमाएँ निर्धारित कर दी गई हैं। इनमें से अनेक तारामण्डल दक्षिण खगोल के हैं जिनकी खोज आधुनिक काल में हुई है। दक्षिण खगोल के महान अन्वेषणकर्ता फ्रांसीसी खगोलविद निकोल लुई द लकाइल ने 1752 ई. में तारामण्डलों के अपने एटलस में दक्षिणी आकाश के 14 नए तारामण्डलों का समावेश किया। लकाइल फ्रांसीसी याम्योत्तर (merid-

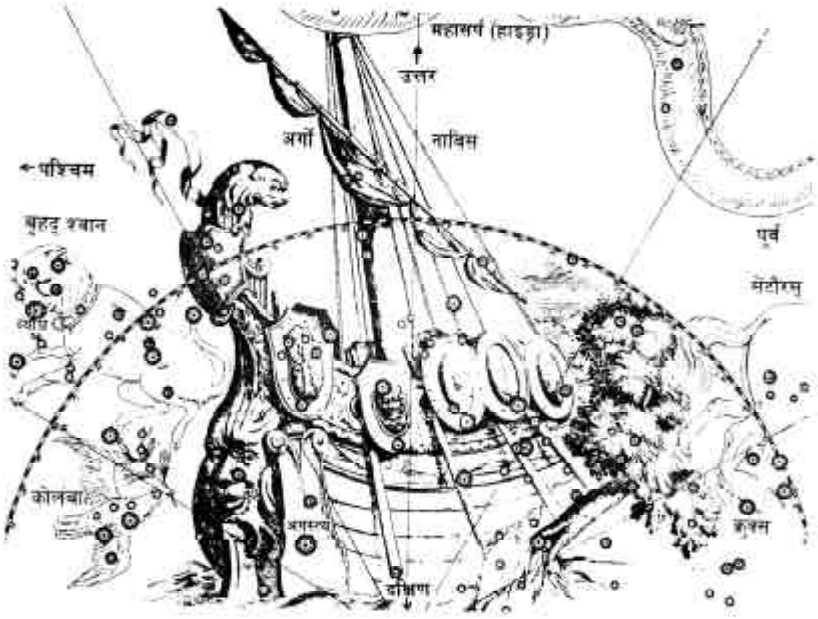

अगस्त्य तारा और उसकी नाव को बनाने वाला तारामण्डल

ian) का मापन करने 1751 ई. में दक्षिण अफ्रीका गए थे। वहाँ उन्होंने करीब दस हज़ार तारों का अवलोकन किया और उनमें से दो हज़ार तारों की एक सारणी प्रकाशित की जो 'दक्षिणी आकाश की तारा सारणी' के नाम से 1763 ई. में प्रकाशित हुई। तारामण्डलों के नाम प्रायः पौराणिक हुआ करते हैं। परन्तु लकाइल ने तारामण्डलों का नामकरण कुछ हटकर किया, जैसे - टेलेस्कोपियम (दूरबीन), माइक्रो स्कोपियम (सूक्ष्मदर्शी), पाइक्सिस (कम्पास), पिक्टोर (चित्रकार), होरोलाजियम (घड़ी) आदि।

दक्षिणी गोलार्द्ध के तारों को उत्तरी गोलार्द्ध के अधिकांश स्थानों से देखना सम्भव नहीं है। लेकिन दक्षिण भारत की कावलूर वेधशाला (तमिलनाडु) से दक्षिण खगोल के काफी बड़े हिस्से का अवलोकन किया जा सकता है। अगस्त्य, नदीमुख और अल्फा सेन्टोरी आदि कुछ प्रमुख तारे यहाँ से देखे जा सकते हैं।

चमकदार अगस्त्य

दक्षिण खगोल का चमकदार अगस्त्य तारा (canopus) आकाश के सबसे चमकीले तारों में दूसरे नम्बर का तारा है। यह विषुव-वृत्त से 53 अंश दक्षिण में है। अतः इसे उत्तरी गोलार्द्ध में 37 अंश उत्तरी अक्षांश से अधिक ऊपर के स्थानों से देखा नहीं जा सकता। मध्य जनवरी से मध्य अप्रैल तक के महीनों में पूरे भारत से इसे आकाश में दक्षिण

दिशा में चमकते देखा जा सकता है। उस समय इसके आस-पास और कोई चमकीला तारा नहीं होता, अतः इसे पहचानने में कोई कष्ट नहीं होता। भारत के दक्षिणी क्षितिज पर दिखाई देने वाला यह तारा अन्टार्कटिका में सिर के ऊपर दिखाई देता है। यह तारा 180 प्रकाश वर्ष दूर है। एक प्रकाशवर्ष 94 खरब 63 अरब कि.मी. के बराबर होता है। अर्थात् आज हम इसकी जो स्थिति देखते हैं, वह 180 वर्ष पूर्व की है। पीले रंग के इस तारे का व्यास सूर्य से 85 गुना अधिक है और सतह का तापमान है 7600 डिग्री सेल्सियस।

इस तारे का उल्लेख गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी श्रीरामचरित्र मानस में इस प्रकार किया है- 'उदति अगस्ति पन्थ जल सोषा।' जिसका संकेत वर्षा की समाप्ति और जल सोखने से है। दक्षिण खगोल के जिस तारामण्डल में यह तारा अगस्त्य स्थित है, उसका पाश्चात्य नाम अर्गो नाविस है जिसका अर्थ आकाशस्थ नाव है। हमारे यहाँ वेदों में भी इसका उल्लेख नाव के ही रूप में हुआ है।

प्राचीन मिस्र में अगस्त्य को काहिनूब और यूनान में कैनोबस कहते थे। इसी से वर्तमान कैनोपस नाम बना है। अरब के लोग इसे सुहेल अर्थात् ज्वलन्त कहा करते थे। चीन में अगस्त्य को लाओउ जिन अर्थात् वृद्ध आदमी कहा जाता था। वहाँ इसकी पूजा होती थी।

अर्गो नाविस तारामण्डल जिसमें अगस्त्य स्थित है, काफी विस्तृत है। अतः इसे चार मण्डलों कारिना, पप्पिस, वेलर और पाइक्सिस में बाँटा गया है। अगस्त्य कारिना मण्डल में है। यह तारा नाविकों के साथ-साथ अब अन्तरिक्षयानों का भी दिशासूचक बन चुका है।

यद्यपि ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अगस्त्य का महत्व है, पर आधुनिक खगोलविज्ञान इस मण्डल के 'इटा' तारे को महत्वपूर्ण मानता है। इटा की चमक क्रमशः कम और अधिक होती रहती है। एडमण्ड हेली के समय 1677 ई. में यह तारा चतुर्थ कान्तिमान (मैग्नीट्यूड) का था (कान्तिमान से किसी तारे की चमक मापी जाती है। कान्तिमान जितना कम होता है, तारा उतना ही ज़्यादा चमकदार होता है)। यह तारा 1843 ई. में खगोलविद जॉन हर्शेल के समय -1 कान्तिमान का हो चुका था। यानी यह अगस्त्य से भी अधिक चमकदार दिखाई देने लगा था। बाद में एक बार फिर इसकी चमक कम होने लगी। फिलहाल, यह 6वें कान्तिमान का तारा है। ऐसे तारों को अनियमित चरकान्ति के तारे (variable star) कहते हैं। इस इटा कारिनी तारे में सूर्य से 100 गुना अधिक द्रव्य है। इन तारों के अध्ययन का खगोल विज्ञान में बहुत महत्व है।

दक्षिण का मार्गदर्शक

पृथ्वी की धुरी के उत्तरी सिरे पर

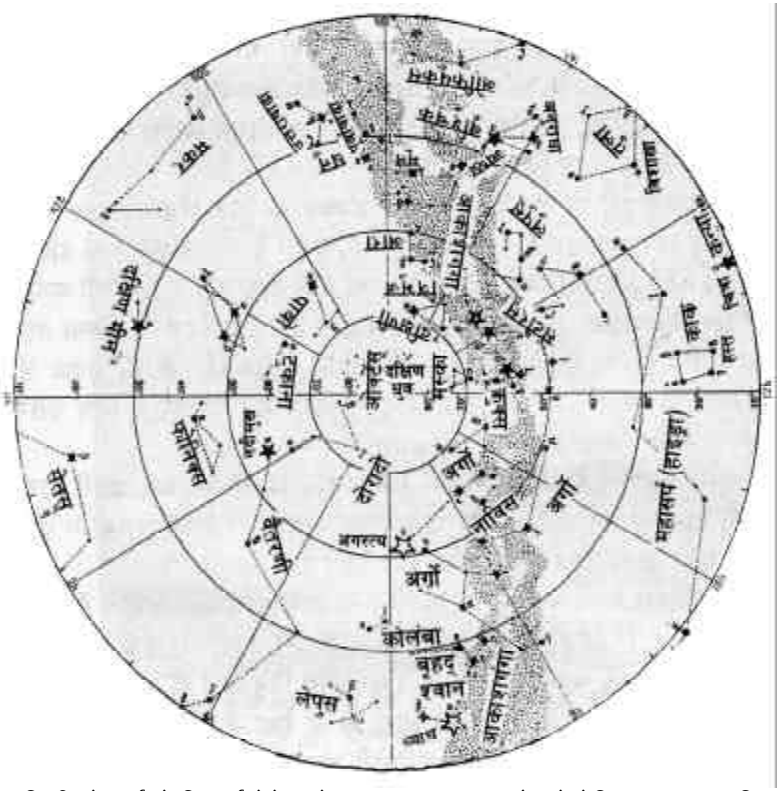

दक्षिणी गोलार्द्ध से दिखाई देने वाले प्रमुख तारामण्डल गौर से देखिए। क्या सब चिर-परिचित तारामण्डल दिखाई दे रहे हैं?

एक तारा है, जिसे ध्रुव तारा कहा जाता है। धुरी की सीध में होने के कारण यह स्थिर दिखाई देता है। परन्तु धुरी के दक्षिण सिरे पर ध्रुव तारे की तरह स्पष्ट दिखाई देने वाला कोई तारा नहीं है। दक्षिण खगोल का ध्रुव बिन्दु अष्टक (ओक्टेंस) नामक तारामण्डल में है। इस मण्डल का एक अत्यन्त मन्दकान्ति तारा सिग्मा ध्रुव बिन्दु के समीप स्थित है। लेकिन धुँधला दिखाई देने के कारण यह तारा नाविकों के लिए वैसी भूमिका अदा नहीं कर सकता, जैसी उत्तरी गोलार्द्ध में ध्रुव तारा करता है।

अल्फा सैन्टोरी भी है यहाँ

सूर्य के बाद ब्रह्माण्ड में पृथ्वी के सबसे निकट का तारा अल्फा सैन्टोरी भी दक्षिण खगोल में ही है। यह व्यास (सिरियस) और अगस्त्य के बाद आकाश

का सबसे चमकीला तारा है। इसे दक्षिण भारत से देखना सम्भव है। फ्रांसीसी खगोलविद रिचाउ ने 1689 ई. में पॉण्डिचेरी जाकर इस तारे का अध्ययन किया और बताया कि यह तारा एक जुड़वाँ तारा है। खगोल में जुडवाँ तारे से तात्पर्य है - दो ऐसे तारे, जो दोनों के संयुक्त गुरुत्व केन्द्र की परिक्रमा कर रहे हों।

अँग्रेज़ खगोलशास्त्री हेण्डरसन ने आशा-अन्तरीप जाकर पहली बार 1839 ई. में पता लगाया कि अल्फा सैन्टोरी हमसे साढ़े चार प्रकाशवर्ष दूर है। 1916 ई. में इस तारे का एक और नन्हा साथी तारा खोजा गया जो इससे भी कुछ अधिक नज़दीक है। अतः इसे प्रोक्सिमा सैन्टोरी नाम दिया गया। प्रोक्सिमा अर्थात् सबसे नज़दीक।

मेगलन मेघ

दक्षिण खगोल की इस चर्चा में मेगलन मेघ की बात न हो तो चर्चा अधूरी-सी लगती है। सन् 1519-22 में पहली बार पृथ्वी की परिक्रमा करने वाले नाविक फर्डिनांड मेजल्लान (मेगलन) के सहयात्री ने इन धुँधले प्रकाशपुंजों की जानकारी दी थी। अतः उनमें से एक को बड़ा मेजल्लानी मेघ और दूसरे को छोटा मेजल्लानी मेघ नाम दिया गया। बाद में पता चला कि ये मेघ यानी नेबुला (गैस पुंज) न होकर गैलेक्सी (मन्दाकिनी) हैं। 1912 ई. में इनकी दूरियाँ मालूम करना सम्भव हो सका। बड़ा मेजल्लानी मेघ दक्षिण खगोल के दोरादो मण्डल में है और हमसे करीब 1 लाख 25 हज़ार प्रकाश वर्ष दूर है। छोटा मेजल्लानी मेघ भी लगभग इतनी ही दूरी पर है और इसे टुकाना मण्डल में देखा जा सकता है। हमारी आकाशगंगा के बाहर की इन्हीं दो मन्दाकिनियों तथा उत्तरी खगोल की देवयानी मन्दाकिनी (andromeda galaxy) को ही हम कोरी आँखों अर्थात् बिना दूरबीन के देख सकते हैं।

इसके अलावा भी दक्षिण खगोल अर्थात् पृथ्वी के दक्षिणी गोलार्द्ध के आकाश में कई दिलचस्प नज़ारे हैं। आकाश की सबसे बड़ी निहारिका अर्थात् नेबुला यहाँ के दोरादो तारा-मण्डल में है। इस नेबुला से घिरा तारा एस-दोरादुस आकाश का सबसे चमकीला तारा है। इसकी चमक सूर्य से दस लाख गुना अधिक है।

तो, ऐसा है, दक्षिणी गोलार्द्ध का आसमान! अब देर किस बात की है जनाब? एक नज़र देखकर इन तारों से भी परिचय बढ़ाइए।

मिलिन्द सावः शासकीय बुनियादी प्रशिक्षण संस्था, डोंगरगाँव (छत्तीसगढ़) में व्याख्याता।

दक्षिणी गोलार्द्ध में खगोलीय क्रियाकलाप

दुनिया के नक्शे में भूमध्यरेखा से दक्षिणी ध्रुव के बीच का इलाका देखिए। अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, दक्षिणी अमरीका की विशाल जनसंख्या यहाँ निवास करती है।

इन सभी इलाकों में खगोलीय अवलोकन एवं अध्ययन की परम्परा होने के बावजूद आधुनिक खगोल से परिचय यूरोपीय देशों के सम्पर्क से ही हुआ। ऑस्ट्रेलिया-न्यूज़ीलैंड की ही बात करें तो यहाँ आधुनिक खगोलीय उपकरणों, अवलोकनों और गणनाओं से वास्ता सन् 1769 के आस-पास हुआ था। 1769 में होने वाले शुक्र पारगमन (ट्रांज़िट ऑफ वीनस यानी दिन के समय शुक्र ग्रह का सूरज की चकती के सामने से गुज़रना) की ये घटना ऑस्ट्रेलिया-न्यूज़ीलैंड से भी दिखाई देने वाली थी। 1769 की शुक्र पारगमन की घटना इसलिए भी महत्वपूर्ण थी क्योंकि इससे पहले 1761 में शुक्र पारगमन के दौरान पैरेलेक्स विधि से सूरज से पृथ्वी की दूरी निकालने के प्रयासों में मिले परिणाम और सैद्धान्तिक आँकड़ों में फर्क दिखाई दे रहे थे। यह पहला मौका था जब पैरेलेक्स विधि के लिए इतनी बड़ी आधार रेखा मिल रही थी जिसका एक छोर दक्षिणी गोलार्द्ध में था। पारगमन की इस घटना ने सूर्य-पृथ्वी के बीच की दूरी (एक एस्ट्रॉनॉमिकल यूनिट) को कुछ शुद्धता से नापने में मदद की थी।

18वीं सदी के अन्त में अँग्रेज़ खगोलविद विलियम डेव्स ने सिडनी के पास दो छोटी वेधशालाएँ शुरू कीं। उन्होंने ऑस्ट्रेलियाई इलाकों के अक्षांश-देशान्तर की गणना भी की। इस तरह यहाँ आधुनिक खगोल विज्ञान की नींव रखी गई।

दक्षिण अफ्रीका खगोलीय अवलोकनों के हिसाब से काफी बेहतर जगह थी। यहाँ से साल में काफी महीने आसमान साफ-साफ देखा जा सकता था और वेधशालाओं की स्थापना के लिहाज़ से ऊँचे स्थान भी उपलब्ध थे। 17वीं सदी में पुर्तगाली व डच समुद्री बेड़ों ने यहाँ से गुज़रते हुए केप-ऑफ गुडहोप में अस्थाई अवलोकन शालाएँ बनाईं और अवलोकन किए। सन् 1751 में फ्रेंच रॉयल अकादमी ने लकाइल को केपटाउन भेजा। लकाइल ने लगभग दस हज़ार तारों और 42 नेबुला को सूचीबद्ध किया।

दक्षिण अफ्रीका में पहली वेधशाला रॉयल ऑब्ज़रवेट्री, 1820 में

स्थापित हुई। 1834-38 के बीच जॉन हर्शेल (विलियम हर्शेल के पुत्र) ने अपनी निजी वेधशाला स्थापित कर नेबुला और डबल स्टार पर काम को आगे बढ़ाया।

1882 में डरबन में शुक्र पारगमन को देखने के लिए एक वेधशाला को शुरू किया गया। धूमकेतुओं को देखने तथा अन्य आकाशीय घटनाओं की वजह से जनमानस की रुचि भी खगोल विज्ञान में बढ़ती है। आज भी यूरोप-अमरीका के कई खगोल केन्द्र दक्षिण अफ्रीका में कार्यरत हैं।

इसी तरह अगर हम दक्षिण अमरीका को देखें तो 17वीं सदी में जब स्पेन, पुर्तगाल, ब्रिटेन, फ्रांस जैसी औपनिवेशिक ताकतें पेरू, चिली, ब्राज़ील, अर्जेन्टाइना आदि तक पहुँचीं तो वे अपने साथ आधुनिक खगोल की कई विशेषताएँ भी लेकर पहुँचीं। मसलन, अक्षांश-देशान्तर नापन की तकनीक, गैलीलियो-कॉपर्निकस-केप्लर के विचार, आधुनिक उपकरण आदि। दक्षिण अमरीकी ज़मीन से सूरज की धरती से दूरी निकालने, भूमध्य रेखा पर देशान्तर रेखाओं की नपाई, ग्रहणों का अवलोकन, दक्षिणी आकाश में तारों के समूहों के अध्ययन के लिए खगोलीय वेधशालाओं का निर्माण शुरू किया गया।

1871 में अमरीका की मदद से अर्जेन्टाइना में खगोल वेधशाला स्थापित हुई। अमरीकी खगोलविद बेंजामिन गूल्ड ने अर्जेन्टाइना से दिखाई देने वाले तारों की सूची तैयार की और फोटो सहित इसे प्रकाशित भी किया।

* * * *

शुरू-शुरू में ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका या दक्षिण अमरीका की जनता यह सारा तामझाम सिर्फ देखती-समझती रही लेकिन बाद में उनकी भागीदारी भी बढ़ती गई। यहाँ समझने वाली बात यह है कि यूरोप-अमरीका को भी दीर्घकालीन खगोलीय अध्ययनों में दक्षिणी इलाकों के साथ मिलकर काम करने की गरज थी। यह सिलसिला 300-400 साल पहले शुरू हुआ और आज भी जारी है। आज की तारीख में एक ओर अन्तर्राष्ट्रीय खगोलीय संघ काम कर रहा है तो दक्षिणी गोलार्द्ध के देशों का अपना खगोलीय संगठन भी अस्तित्व में है। ये देश कुछ प्रोजेक्ट में मिलकर काम करते हैं तो कुछ को अपनी रुचियों के हिसाब से अंजाम तक पहुँचाते हैं।

(विविध स्रोतों से संकलित)